गणित की शिक्षा और कक्षा
शिक्षक बनाम सुगमकर्ता

निदेश सोनी

एक आम इन्सान के जीवन में ऐसा बहुत कुछ होता है जिसे हम पाठ्यपुस्तक के गणित से जोड़ सकते हैं।

मैं लगभग 21 सालों से बच्चों के साथ गणित विषय पर काम कर रहा हूँ। इनमें से शुरुआती 7 वर्षों में मैंने बच्चों के साथ गणित शिक्षण का कार्य उसी तरीके से किया जैसे आम तौर पर पारम्परिक कक्षाओं में होता है, अर्थात् यह माना जाता है कि शिक्षक का कार्य सिखाना है और बच्चों का कार्य सीखना है। इस दौरान मैं पारम्परिक स्कूल और कोचिंग का हिस्सा रहा और प्रचलित व पारम्परिक तरीकों की मदद से ही गणित शिक्षण पर काम करता रहा। 7 वर्षों तक इस प्रकार काम करने के बाद मैंने शिक्षा पर काम करने वाली गैर सरकारी संस्थाओं के साथ गणित पर काम करना शुरू किया और अब मैं पिछले 14 वर्षों से जिस तरह से बच्चों के साथ गणित शिक्षण में संलग्न हूँ, उसमें सीखने और सिखाने की प्रक्रिया एकतरफा न होकर दोतरफा है, यानी मैं भी बच्चों से सीख रहा हूँ और बच्चे भी मुझसे सीख रहे हैं। इन 14 वर्षों में एक बात जो मुझे बेहतर तरीके से समझ आई है, वह यह है कि एक सुगमकर्ता* के तौर पर हमें 'सिखाना नहीं होता है, सीखना होता है'।

बच्चों के साथ गणित सीखने की इस यात्रा में और अपने सहकर्मियों के साथ चर्चा, बातचीत व काम के दौरान मैंने काफी कुछ सीखा और सीखने की यह प्रक्रिया अभी भी जारी है। मैंने जो कुछ भी सीखा या सीख रहा हूँ, उसे अपने काम में शामिल करने का लगातार प्रयास कर रहा हूँ। मैं इस लेख में अपने सीखने के अनुभवों और उससे उपजे चिन्तन को इस आशा के साथ शामिल कर रहा हूँ कि शायद यह अन्य साथियों के लिए मददगार साबित हो।

* *वर्तमान युग में अध्यापक की भूमिका एक सुगमकर्ता के रूप में अपेक्षित है। सुगमकर्ता कक्षा-कक्ष में चर्चा, प्रश्नों व सहायक शिक्षण सामग्री की मदद से बच्चों को सीखने के ऐसे मौके उपलब्ध कराते हैं जिससे बच्चे खुद से व एक-दूसरे की मदद से अपना ज्ञान गढ़ सकें।*

दस्तावेज़ों में गणित शिक्षण

भारत की नई राष्ट्रीय शिक्षा नीति कहती है कि शिक्षा का उद्देश्य ऐसे अच्छे इन्सान तैयार करना है जो जिज्ञासु और तार्किक क्षमता से युक्त हों, जिनमें धैर्य और सहानुभूति के गुण हों, साहस और लचीलापन हो, वैज्ञानिक चेतना हो, रचनात्मक कल्पनाशक्ति और नैतिक मूल्य हों। ऐसे नागरिक ही उस समाज का निर्माण करने में सक्षम होंगे जिसकी कल्पना भारत के संविधान द्वारा की गई है। इसी सन्दर्भ में यदि हम गणित शिक्षण के बारे में बात करें तो गणित शिक्षण का आधार पत्र (2005) कहता है कि विद्यालयों में गणित-शिक्षा का मुख्य उद्देश्य बच्चों की सोच का गणितीयकरण करना है, साथ ही प्रारम्भिक स्तर पर गणित-शिक्षा ऐसी होनी चाहिए जो बच्चों को आगे आने वाले जीवन की चुनौतियों का सामना करने के लिए तैयार करे। गणित का यह आधार पत्र उन परिस्थितियों के बारे में भी बात करता है, जिसमें गणित सीखा जाना चाहिए। इसमें 6 बातों पर ज़ोर दिया गया है:

1. बच्चे गणित में आनन्द लेना सीखें,
2. बच्चे महत्वपूर्ण गणित सीखें,
3. गणित बच्चों के जीवन-अनुभव का हिस्सा हो जिसके बारे में वे बात करें,
4. बच्चे अर्थपूर्ण समस्याएँ प्रस्तुत करें और उनके हल ढूँढ़ें,
5. बच्चे सम्बन्धों और संरचनाओं की सोच बनाने में अमूर्त विचारों का प्रयोग करें,
6. बच्चे गणित की मूल संरचना को समझें तथा शिक्षकों से अपेक्षा है कि वे प्रत्येक बच्चे को कक्षा की प्रक्रियाओं के साथ जोड़कर रख सकें।

जब हम इन दोनों महत्वपूर्ण दस्तावेज़ों के प्रकाश में गणित की शिक्षा और गणित की कक्षा को देखते हैं तो कुछ अनुभव और विचार प्रासंगिक हो जाते हैं, जिन्हें अपने शिक्षण व शिक्षण योजना में शामिल करना मददगार साबित हो सकता है।

क्या हम अपने जीवन के गणित को पाठ्यपुस्तक के गणित से जोड़ सकते हैं?

मुझे लगता है कि हाँ, ऐसा किया जा सकता है। एक आम इन्सान के जीवन में ऐसा बहुत कुछ होता है जिसे हम पाठ्यपुस्तक के गणित से जोड़ सकते हैं। आइए, कुछ उदाहरणों की मदद से इसे समझने की कोशिश करते हैं:

(1) कक्षा छठवीं में पढ़ने वाले एक बच्चे प्रवीण के पिता ने अपने खेती के काम के लिए साहूकार से 10 हज़ार रुपए का कर्ज़ लिया है। यह कर्ज़ उन्होंने 3 प्रतिशत मासिक की दर से लिया है। वह 100 रुपए पर 3 रुपए महीने यानी 1000 रुपए पर 30 रुपए



और 10,000 रुपए पर 300 रुपए महीने का ब्याज साहूकार को देते हैं। 8 माह से कर्ज़ चल रहा है, अभी तक वे ब्याज के तौर पर 2400 रुपए दे चुके हैं। मूलधन अभी भी बाकी है।

वास्तविक दुनिया का यह अकेला उदाहरण ही पाठ्यपुस्तक के गणित में शामिल साधारण ब्याज, चक्रवृद्धि ब्याज, मूलधन, लाभ, हानि, मासिक दर, वार्षिक दर, संख्याओं की मात्रात्मक समझ आदि कई अवधारणाओं पर बच्चों के साथ काम करने की अपार सम्भावनाएँ प्रस्तुत करता है। बच्चों के साथ चर्चा करने के लिए इसमें कई प्रश्न निहित हैं, जैसे– कर्ज़ की ज़रूरत क्यों पड़ती है? साहूकार से ही कर्ज़ लेने की क्या ज़रूरत है? क्या बैंक से कर्ज़ नहीं लिया जा सकता है? बैंक से कर्ज़ लेने में क्या समस्या आती है? 3 प्रतिशत मासिक ब्याज का मतलब वार्षिक रूप से कितना होता है? वर्तमान में बैंक में ब्याज की दर कितनी है? बैंक व साहूकार से लिए समान कर्ज़ में, दोनों स्थितियों में दिए जाने वाले ब्याज पर कितना अन्तर आएगा? क्या कर्ज़ के लिए कोई और भी तरीके हो सकते हैं, जैसे– स्व-सहायता समूहों के द्वारा कर्ज़ लेना? इनमें ब्याज का प्रतिशत कितना है? साहूकार से गाँव में कितने लोग कर्ज़ लेते हैं? ब्याज से साहूकार की हर माह और पूरे साल में कितनी आय होती होगी?

(2) लगभग 200 घरों वाले एक छोटे-से गाँव के ज़्यादातर पालकों का कहना है कि उनके पास बच्चों की पढ़ाई-लिखाई के लिए पैसे नहीं हैं, यहाँ तक कि उनके लिए छोटी-मोटी ज़रूरतों जैसे– नोटबुक, पेंसिल आदि को पूरा करने के लिए भी पैसे नहीं रहते। गाँव के ज़्यादातर पालक खेतिहर मज़दूर हैं जिनके पास जो ज़मीन है, वह बहुत कम है, साथ ही पानी की भी दिक्कत है। इसी गाँव में कक्षा 4 से लेकर 8 तक के बच्चों ने मिलकर कुछ जानकारियाँ एकत्र कीं। जैसे– एक गिलास शराब की कीमत 15 रुपए है। एक जगह से हर रोज़ लगभग 30 गिलास शराब बेच दी जाती है, मतलब लगभग 450 रुपए की शराब बिक जाती है। गाँव में ऐसी 8 जगहें हैं जहाँ से शराब बेची जाती

है, यानी हर दिन लगभग 3600 रुपए की बिक्री होती है। कई जगहों पर ब्रिकी ज़्यादा भी होती है इसलिए पूरे माह में शराब की औसतन प्रतिदिन बिक्री को 4000 रुपए माना गया। इस तरह से अन्दाज़ा लगाया गया कि एक महीने में लगभग 1,20,000 रुपए की शराब खरीदी जाती है।

इस पूरी प्रक्रिया के दौरान बच्चों ने बहुत-सी बातों पर चिन्तन और मनन किया और उनकी ओर से कई सवाल सामने आए— शराब में हर दिन बहुत सारा पैसा जा रहा है, अगर इस पैसे को बचा लिया जाए तो यह परिवार के काम आएगा। अगर हमारे छोटे-से गाँव में इतना पैसा शराब पर खर्च हो रहा तो पूरे विकासखण्ड के 165 गाँवों को मिलाने पर तो यह राशि विशाल होगी।

बच्चों द्वारा किया गया यह विश्लेषण कई सारे सवाल खड़ा करता है, इस विश्लेषण से उन्हें अपने आसपास के ताने-बाने को समझने में मदद मिलती है। अब वे बड़ी संख्याओं के साथ केवल पढ़ाई नहीं कर रहे होते हैं बल्कि उन संख्याओं की मात्रात्मक समझ को समझने का प्रयास करते हैं, अपने जीवन में इन संख्याओं के महत्व को महसूस करते हैं क्योंकि अब संख्याएँ उनके लिए केवल संख्याएँ नहीं रहीं बल्कि उनके जीवन का हिस्सा हैं।

(3) कुछ दिनों से कक्षा में प्रतिशत पर बात चल रही थी। एक दिन रवीना चिप्स का एक खाली पैकट लेकर आ गई जिसकी कीमत 20 रुपए थी और उस पर 20 प्रतिशत एक्स्ट्रा लिखा हुआ था। उसने मुझसे कहा कि "भैया, इस पर 20 प्रतिशत एक्स्ट्रा लिखा है लेकिन चिप्स तो केवल 10 ग्राम ही ज़्यादा दे रहे हैं।" हमने पैकेट को बच्चों के बीच रख दिया और सभी बच्चों से रवीना के सवाल पर चर्चा करने के लिए कहा। बच्चों ने पैकेट को अलट-पलट करके देखा, आपस में बात की, हिसाब लगाया और बोले कि रवीना सही कह रही है। राहुल और रवीना ने मिलकर पूरी कक्षा को बताया कि चिप्स का यह पैकट 50 ग्राम वज़न का आता है, कम्पनी इस पर 20 प्रतिशत ज्यादा चिप्स यानी 50 ग्राम का 20 प्रतिशत अर्थात् 10 ग्राम ज़्यादा दे रही है, इस तरह से यह पैकेट 60 ग्राम का हो गया है।

मैंने उनसे पूछा कि "जब आप सबका हिसाब एक ही आ रहा है तो इसमें समस्या कहाँ है?" इस पर रवीना ने कहा कि "पैकेट पर 20 प्रतिशत एक्स्ट्रा लिखा था जिसे पढ़कर ऐसा लगा कि चिप्स खूब ज़्यादा हैं पर वो तो 10 ग्राम ही ज़्यादा थे।" चिप्स बेचने का यह तरीका भ्रामक है या नहीं, यह एक अलग मसला था परन्तु इसने बच्चों के बीच चर्चा के कई आयाम खोल दिए।

इस चर्चा के बाद बच्चों ने कुछ

जीवन की वास्तविकता से जुड़े ऐसे उदाहरण और कक्षा-कक्ष में बच्चों को इनके साथ जूझने के लिए दिए गए पर्याप्त मौके और चर्चा, उनके लिए चिन्तन के नए आयाम खोलते हैं।

दिन अलग-अलग चीज़ों पर मिलने वाली छूट के बारे में पता किया, कक्षा में बात की, अपने घरों पर बात की। कुछ दिन बाद बच्चे अपने साथ खाली पन्नियाँ, डिब्बे और पुराने अखबार की कटिंग लेकर भी आए और उन्होंने अपनी-अपनी समझ को बाकी बच्चों के साथ साझा किया। बच्चों का कहना था कि अलग-अलग उत्पादों पर दी जाने वाली छूट को लेकर कम्पनियाँ जिस प्रकार की जानकारियाँ साझा करती हैं, वे होती तो सही हैं लेकिन भ्रामक हो सकती हैं। जब उनसे पूछा गया कि ये भ्रामक क्यों हैं तो इस पर बच्चों का कहना था कि “इसे हमें समझना चाहिए, जैसे– चिप्स के पैकेट पर 20 प्रतिशत ज़्यादा का मतलब सिर्फ 10 ग्राम ज़्यादा चिप्स थे। 20 प्रतिशत सुनने में ज़्यादा लगता है, पर सच में तो हमें बस 10 ग्राम चिप्स ही अतिरिक्त मिल रहे हैं।” बच्चों ने इस बारे में कई सवाल पूछे, कई दिनों तक कक्षा में इस पर बहस और चर्चा होती रही।

इस चर्चा में हमने कई सवालों पर सोच-विचार किया। जैसे हम प्रतिशत की जो अवधारणा कक्षा में सीखते हैं, उसकी हमारे जीवन में कितनी प्रासंगिकता है? विज्ञापनों में कही जाने वाली बातों और दावों में कितना सच होता है और कितना भ्रम होता है? अगर यह कहा जाए कि अमुक



उत्पाद 50 प्रतिशत भारतीयों की पहली पसन्द है, तो इसका क्या मतलब है? यदि हिन्दुस्तान की आबादी को हम 140 करोड़ मान लें तो क्या 70 करोड़ लोग इस उत्पाद का उपयोग करते हैं? विज्ञापनों में जो दावा किया जाता है, उस पर छोटा-सा स्टार क्यों बनाया जाता है और उसके नीचे 'शर्तें लागू' क्यों लिखा होता है? क्या ये विज्ञापन किसी खास समूह के लिए बनाए जाते हैं और इसके बारे में दावे खास स्थितियों के सन्दर्भ में किए जाते हैं?

ऐसा हो सकता है कि उपरोक्त में से कई उदाहरण हर बच्चे/बच्ची के लिए प्रासंगिक न हों परन्तु एक सुगमकर्ता इस तरह के उदाहरणों या चर्चा के बिन्दुओं को बच्चों के परिवेश से तलाश सकता है। जीवन की वास्तविकता से जुड़े ऐसे उदाहरण और कक्षा-कक्ष में बच्चों को इनके साथ जूझने के लिए दिए गए पर्याप्त मौके और चर्चा, उनके लिए चिन्तन के नए आयाम खोलते हैं। इससे उन्हें पाठ्यपुस्तक के गणित को अपने जीवन में लागू करने का अवसर मिलता है जिससे उनमें यह समझ विकसित होती है कि सवाल और संख्याएँ महज़ किताबी बातें नहीं बल्कि उनके रोज़मर्रा के जीवन का हिस्सा हैं। वे गणनाओं और समस्याओं को केवल कक्षा-कक्ष की एक अनिवार्य प्रक्रिया मानने की जगह, उनमें निहित अर्थ को समझ पाते हैं, जो उनकी व्यावहारिक व सामाजिक समझ को और पुख्ता करता है। इस प्रकार हमारे दस्तावेज़ों में लिखा यह वाक्य कि गणित का उपयोग अपने दैनिक जीवन में आने वाली समस्याओं को हल करने में किया जाए, ज़मीन पर अमल होता हुआ दिखता है।

एक सुगमकर्ता के लिए ऊपर दी गई गतिविधियों को कक्षा-कक्ष, पाठयक्रम व समय-सीमा के बन्धनों के साथ करना आसान नहीं होता। इसके साथ ही कई लोग यह भी मानते हैं कि इन प्रक्रियाओं के साथ क्रियान्वित गणित शिक्षण को गणित नहीं माना जा सकता; उन्हें यह भी लगता है कि इस प्रक्रिया से गणित



शिक्षण करने से पाठ्यपुस्तक का औपचारिक गणित पूरा नहीं होगा और कक्षा-कक्ष में पाठ्यक्रम और सीखने की गति धीमी हो जाएगी। परन्तु वास्तविकता में कक्षा-कक्ष में दिए गए सीखने-सिखाने के इस प्रकार के मौके कक्षा के माहौल को समृद्ध बनाते हैं। इन विविध अवसरों के साथ बच्चे अपनी गति से सीखते हैं, वे समस्याओं को हल करने के अपने तरीके विकसित करते हैं, अनुमान लगाते हैं, अपने तरीकों का इस्तेमाल करते हैं, इन तरीकों का विश्लेषण करते हैं, लगातार अपनी समझ में इज़ाफा करते हैं और अपने आसपास की दुनिया को गणितीय नज़रिए से देखने व समझने का प्रयास करते हैं। यह सम्भव है कि सीखने-सिखाने के ऐसे प्रयासों से शुरुआती दौर में कक्षा-कक्ष की गति कुछ धीमी हो जाए, परन्तु एक बार इस प्रक्रिया की स्थापना हो जाने के बाद, यह तय है कि बच्चे विविध गणितीय अवधारणाओं को तेज़ी-से सीखेंगे। बहुत-से सुगमकर्ता गणित शिक्षण के इन तरीकों का अपनी कक्षा में प्रयोग करते हैं और इन कक्षाओं में बच्चे गणित के साथ ज़्यादा सहज नज़र आते हैं।

निदेश सोनी: पिछले 15 वर्षों से *एकलव्य* संस्था के शाहपुर (बैतूल) केन्द्र में कार्यरत हैं। बच्चों के साथ गणित सीखने-सिखाने में खासी रुचि रखते हैं।
सम्पर्क: nideshsoni@gmail.com

सभी चित्र: उबिता लीला उन्नी: डिज़ाइनर व चित्रकार हैं। इन्हें बच्चों और बच्चों की कहानियों के साथ काम करना बहुत पसन्द है। वर्तमान में *एकलव्य* के डिज़ाइन समूह के साथ फैलोशिप के तहत काम कर रही हैं।

नोट: इस लेख में उपयोग किए उदाहरणों व चर्चाओं को *एकलव्य* के एक कार्यक्रम 'शिक्षा की उड़ान' द्वारा पिछले लगभग तीन वर्षों से संचालित मोहल्ला लर्निंग एक्टिविटी सेंटर (MLAC) से लिया गया है। बैतूल ज़िले के शाहपुर विकासखण्ड व भोपाल ज़िले के बैरसिया विकासखण्ड में इस तरह के 50 केन्द्रों को संचालित किया जा रहा है, जहाँ पर बच्चे शाला समय के पहले/बाद में आकर स्थानीय सुगमकर्ता के साथ सीखने-सिखाने की प्रक्रिया में शामिल होते हैं।

यह लेख *सामूहिक पहल* पत्रिका के फरवरी 2022, वॉल्यूम 2, अंक 6 से साभार।

